शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जनवरी 2022
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

स्वामी विवेकानन्द के राजनीतिक विचार

डॉ. गौरी सिंह परते
सहायक प्राध्यापक
राजनीति विज्ञान
शासकीय महाविद्यालय
मेंहदवानी, डिन्डौरी, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

भारतीय पुनर्जागरण के अग्रदूत महापुरुषों में स्वामी विवेकानंद का अन्यतम स्थान है।इनका बचपन का नाम नरेन्द्रनाथ था। शारीरिक दृष्टि से नरेन्द्रनाथ हृष्ट-पुष्ट थे। उनका शारीरिक गठन और प्रभावशाली मुखाकृति प्रत्येक को अपनी और आकर्षित कर लेती थी। रामकृष्ण परमहंस के शिष्य बनने से पूर्व वे कुश्ती, मुक्केबाजी, घुड़सवारी और तैरने आदि में भी निपुणता प्राप्त कर चुके थे। उनकी बुद्धि विलक्षण थी, जो पाश्चात्य दर्शन में ढाली गयी थी। उन्होंने देकार्त, ह्यम, कांट, फाखते, स्पेनेजा, हेपिल, शौपेनहावर, कोमट, डार्विन और मिल आदि पाश्चात्य दार्शनिकों की रचनाओं को गहनता से पढ़ा था। इस अध्ययन के कारण उनका दृष्टिकोण आलोचनात्मक और विश्लेष्णात्मक हो गया। प्रारंभ में वे ब्रह्मसमाज की शिक्षाओं से प्रभावित हुये परन्तु वैज्ञानिक अध्ययनों के कारण ईश्वर से उनका विश्वास नष्ट हो गया था। पर्याप्त काल तक वे नास्तिक बने रहे और कोलकाता शहर में ऐसे गुरु की खोज में घूमते रहे जो उन्हें ईश्वर के अस्तित्व का ज्ञान करा सके।

प्रस्तावना

स्वामी विवेकानंद की दृष्टि में भारत का हित सर्वोपरि था और वे सदैव उसका चिन्तन किया करते थे। उनका राष्ट्रवाद आध्यात्मिकता पर आधारित था। वे इस विचार के थे कि सभी सुधार धर्म के माध्यम से होने चाहिये। राष्ट्रवाद का यह आध्यात्मिक अथवा धार्मिक सिद्धांत स्वामी विवेकानंद की प्रमुख राजनीतिक देन थी। स्वामी विवेकानंद का मानना था कि धर्म का राजनीति से गहरा सम्बन्ध है। वे सामाजिक जीवन से विरक्त होकर केवल निजी मोक्ष प्राप्ति के लिए तपस्या तथा समाधि में लीन नहीं हो गए, वे एक सक्रिय सन्यासी थे। उनके कार्यों से तत्कालीन राजनीति पर बहुत प्रभाव पड़ा। इससे भारतीयों के मन में आत्म-गौरव का एक सशक्त भाव उदित हुआ, जिससे राष्ट्रीय उत्थान का मार्ग प्रशस्त होने में सहायता प्राप्त हुई।

प्रारंभिक जीवन

स्वामी विवेकानंद का जन्म 12 जनवरी, 1863 को कलकत्ता (कोलकाता) बंगाल में हुआ। उनके बचपन का नाम नरेंद्रनाथ था। उनके पिता पेशे से वकील थे और पाश्चात्य सभ्यता में विश्वास रखते थे। उनकी माता अत्यंत धार्मिक महिला थीं जिसका प्रभाव बालक नरेंद्र पर सर्वाधिक पड़ा। बचपन से ही नरेंद्र को अच्छी अच्छे संस्कारों और परवरिश के कारण एक उच्च कोटि की सोच मिली। नरेन्द्र का विवाह नहीं हुआ था। युवा दिनों से ही उनमें आध्यात्मिकता में रुचि थी। वे हमेशा भगवान की तस्वीरों, जैसे- शिव, राम और सीता के सामने ध्यान लगाकर साधना करते थे।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जनवरी 2022
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

संन्यासियों और साधुओं की बातें उन्हें हमेशा प्रेरित करती रहीं।

प्रारंभिक शिक्षा

कलकत्ता में एक समृद्ध बंगाली परिवार में जन्मे नरेंद्रनाथ ने एक युवा लड़के के रूप में अपने तेज बुद्धि को प्रदर्शित किया। उनकी शरारती प्रकृति ने संगीत में उनकी रूचि को झुठलाया। दोनों के रूप में अच्छी तरह से मुखर उन्होंने अपनी पढ़ाई में भी उत्कृष्ट प्रदर्शन किया। सबसे पहले मेट्रोपॉलिटन संस्थान में और बाद में कलकत्ता के प्रेसिडेंसी कॉलेज में। जब तक उन्होंने कॉलेज से स्नातक की उपाधि प्राप्त की, उन्होंने विभिन्न विषयों का एक विशाल ज्ञान प्राप्त कर लिया था। वह खेल, जिमनास्टिक, कुश्ती और शरीर निर्माण में सक्रिय थे। वह एक शौकीन पाठक थे और सूर्य के नीचे लगभग सब कुछ पढ़ता थे। उन्होंने हिन्दू धर्म ग्रंथों को देखा। दूसरी ओर उन्होंने डेविड ह्यूम, जोहान गॉटलीब फिच और हर्बर्ट स्पेंसर के पश्चिमी दर्शन, इतिहास और आध्यात्मिकता का अध्ययन किया। अपनी बौद्धिक योग्यता को पूरा करने के लिए नरेंद्रनाथ सभी धर्मों के प्रमुख आध्यात्मिक नेताओं से मिले। उन्होंने एक सवाल पूछा 'क्या आपने भगवान को देखा है ?' तब हर बार उन्हें असंतोषजनक उत्तर मिला। उन्हें भगवान के अस्तित्व पर सवाल और कुछ समय तक अज्ञेयवाद में विश्वास करने के लिए प्रेरित किया। फिर भी वह पूरी तरह से सर्वोच्च होने के अस्तित्व की अनदेखी नहीं कर सके। वह कुछ समय के लिए केशव चंद्र सेन के नेतृत्व में ब्रह्मो आंदोलन से जुड़े हुए। ब्रह्मो समाज ने मूर्ति पूजा, अंधविश्वास से ग्रस्त हिन्दू धर्म के विपरीत एक भगवान को मान्यता दी। आध्यात्मिक संकट के दौरान, विवेकानन्द ने पहली बार स्कॉटिश चर्च कॉलेज के प्रिंसिपल विलियम हस्ति से श्री रामकृष्ण के बारे में सुना।

स्वामी विवेकानंद के राजनीतिक विचार

यह सत्य है कि विवेकानंद राजनीतिक आन्दोलन के पक्ष में नहीं थे। इस पर भी उनकी इच्छा थी कि एक शक्तिशाली, बहादुर और गतिशील राष्ट्र का निर्माण हो। वे धर्म को राष्ट्रीय जीवन रूपी संगीत का स्थायी स्वर मानते थे। प्रत्येक राष्ट्र का जीवन किसी एक तत्व की अभिव्यक्ति है। उदाहरण के लिये धर्म भारत के इतिहास का एक प्रमुख निर्धारक तत्व रहा है। स्वामी विवेकानंद के शब्दों में "जिस प्रकार संगीत में एक प्रमुख स्वर होता है, वैसे ही हर राष्ट्र के जीवन में एक प्रधान तत्व होता है, अन्य सभी तत्व इसी में केन्द्रित होते हैं। प्रत्येक राष्ट्र का अपना अन्य सब कुछ गौण है, भारत का तत्व धर्म है, समाज-सुधार तथा अन्य सब कुछ गौण है।" अन्य शब्दों में विवेकानंद ने राष्ट्रवाद के धार्मिक सिंद्धांत का प्रतिपादन किया, उनका विशवास था कि धर्म ही भारत के राष्ट्रीय जीवन का प्रमुख आधार बनेगा, उनके विचार में किसी राष्ट्र को गौरवशाली, उसके अतीत की महत्ता की नींव पर ही बनाया जा सकता है। अतीत की उपेक्षा करके राष्ट्र का विकास नहीं किया जा सकता, वे राष्ट्रीयता के अध्यात्मिक पक्ष में विश्वास करते थे उनका विचार था कि भारत में स्थायी राष्ट्रवाद का निर्माण धार्मिकता के आधार पर ही किया जा सकता है।

स्वामी विवेकानन्द जी का जन्म उस युग में हुआ जब समूचा विश्व राजनीति की स्वस्थ परम्परा से पूर्णतः दिग्भ्रमित हो चुका था। राजनीतिक सुव्यवस्था के बिना एक स्वस्थ समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। न ही समाज में व्याप्त विसंगतियों का समाधान ही

किया जासकता है। यद्यपि स्वामी विवेकानन्द जी राजनीतिक नहीं थे। लेकिन वह अपने राष्ट्र एवं भारतवासियों के कल्याण के प्रति पूर्णतः समर्पित थे। इसीलिए स्वामी जी राजनीति के प्रति पूर्णतः समर्पित न होते हुए भी भारत के कल्याण के लिए कटिबद्ध होकर सतत् प्रयत्नशील रहे। स्वामी जी समग्र रूप से भारतीय थे। उनके सम्पूर्ण विचारों में राष्ट्र के प्रति अटूट श्रद्धा और भारतवासियों के प्रति प्रेम तथा उनकों संगठित होने में प्रेरणा स्रोत के रूप में अद्वितीय कार्य किया उनके विचारों ने बंगाल के राष्ट्रीय आन्दोलन में अथक योगदान दिया। स्वामी जी इस बात पर बल देते थे कि एक ऐसा जनमानस तैयार होना चाहिए जो परतंत्रता को नहीं वरन स्वतंत्रता को स्वीकार करे और उनकी प्राप्ति के लिए हर संभव प्रयास करे। प्रत्येक राष्ट्र का अपना कर्तव्य होता है। और स्वभावतः हर राष्ट्र की अपनी विशेषता है तथा अपना व्यक्तित्व है। प्रत्येक राष्ट्र अन्य राष्ट्रों के साथ संबंध रखने के लिए भी अपनी एक धारणा रखता है। यही राष्ट्रीय जीवन का आधार है। स्वामी विवेकानन्द जी ने अपने ओजस्वी संदेशों के द्वारा सुप्त भारत की तन्द्रा को भंगकर एक नवीन भारत का निर्माण किया। स्वामी विवेकानन्द सम्पूर्ण मानवता को एक परिवार मानते थे।

स्वामी जी कहते हैं कि - विकास ही जीवन है और संकोच ही मृत्यु प्रेम ही विकास है और स्वार्थपरता ही संकोच। प्रेम ही जीवन का एकमात्र नियम है। जो प्रेम करता है वह जीता है। जो स्वार्थी है वह मरता है। अतः प्रेम के लिए ही प्रेम करो प्रेम ही जीवन का एकमात्र शाश्वत नियम है।'' किसी भी कर्तव्य की उपेक्षा न करो। प्रत्येक कर्म पवित्र है और कर्तव्य निष्ठा भगवत्पूजा का सर्वोत्कृष्ट रूप है। ईर्ष्या और अहंकार को त्याग दो। एक होकर दूसरों के लिए कार्य करना सीखो। यही हमारे भारत की सबसे बड़ी आवश्यकता है। स्वामी विवेकानन्द जी ने अनेक राजनीतिक समस्याओं पर यह चिंतनस्वरूप अपने विचार प्रस्तुत किए है।

राष्ट्रवाद

स्वामी विवेकानन्द राष्ट्र की महत्ता के प्रतिपादक थे। उनके अनुसार भारत को अपने अध्यात्म से पश्चिम को विजित करना होगा। उनका कहना था, ''एक बार पुनः भारत को विश्व की विजय करनी है। उसे पश्चिम की आध्यात्मिक विजय करनी हैं।'' मानवेन्द्रनाथ राय ने विवेकानन्द की आलोचना करते हुए उनकी राष्ट्रवाद संबंधी विचारधारा के प्रभाव का इस प्रकार वर्णन किया है। "विवेकानन्द का राष्ट्रवाद आध्यात्मिक साम्राज्यवाद था। उन्होंने तरुण भारत को प्रेरित किया कि वह भारत के आध्यात्मिक उद्देश्यों में विश्वास रखे। उनके दर्शन के आधार पर आगे चलकर उन तरुण बुद्धिजीवियों के परम्परानिष्ठ राष्ट्रवाद का निर्माण हुआ जो अपने वर्गों से संबंध-विच्छेद कर चुके थे और जिन्होंने अपने को गुप्त समुदायों के रूप में संगठित किया तथा ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने के लिये हिंसा और आंतक का समर्थन किया। आध्यात्मिक श्रेष्ठता के द्वारा विश्व को विजय करने के इस रोमांचपूर्ण स्वप्न ने उन तरुण बुद्धिजीवियों में भी नयी चेतना जाग्रत कर दी जिनकी दयनीय आर्थिक स्थिति ने उन्हें व्याकुल कर रखा था।" विवेकानन्द ने राष्ट्रवाद को आध्यात्मिक पुट दिया। उनका यह कार्य उनके इस प्रबल विश्वास का कि भविष्य में धर्म ही भारत का मेरुदंड बनेगा, अनुगामी था। वे इस अर्थ में पुनरभ्युदयवादी थे। वे भारत के अतीत का आह्वान कर भविष्य के भारत का निर्माण करना

चाहते थे। वे भारत राष्ट्र की महत्ता एवं एकता के पोषक थे। उनका राष्ट्र प्रेम भारत-माता के चित्र में समाहित था। वे उग्र राष्ट्रवाद के पक्षपाती थे और इसी कारण से उन्होंने भगिनी निवेदिता को 'आक्रमण हिन्दूवाद' का उपदेश दिया। स्वामी विवेकानन्द आधुनिक सामाजिक एवं राजनीतिक चिंतन के (स्वामी दयानन्द के पश्चात्य) ऐसे दूसरे विचारक हैं जिन्होंने सक्रिय प्रतिरोध का मार्ग भारतीयों के लिये प्रशस्त किया। स्वामी दयानन्द ने इस प्रतिरोध को जहाँ सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में अधिक प्रचारित किया वहाँ स्वामी विवेकानन्द ने यह चेतना राजनीतिक क्षेत्र में अधिक व्यापक बनायी। उनके द्वारा राष्ट्रीय उन्नति एवं जागरण के लिए दिया गया सशक्त वक्तव्य आज भी भारतीयों के लिए प्रेरणादायक है। विवेकानन्द ने कहा था यह "राष्ट्र के रुप में अपना व्यक्तित्व विस्मृत कर बैठे हैं और यही इस देश में सब दुष्कर्मों की जड़ है। हमें देश को उसका खोया हुआ व्यक्तित्व वापस देना है और जनता का उत्थान करना है किन्तु सब उसके उत्थान की शक्ति भी अन्तराल से आनी चाहिए, अर्थात परम्परानिष्ठ हिन्दू समाज में से है। प्रत्येक देश में जो बुराइयां देखने को मिलती हैं वे धर्म के कारण नहीं है बल्कि धर्म-द्रोह के कारण हैं। इसलिए दोष धर्म का नहीं है, मनुष्यों का है।

व्यक्ति और राज्य

व्यक्ति और राज्य के बारे में स्वामी जी का मत व्यक्ति और समाज के संबंधों के विश्लेषण से आरम्भ होता है। उनका कहना है कि सृष्टि बनने के बाद पहले जो कानून दुनिया में आये वे ईश्वर प्रदत्त थे। राजा राज्य करता था और प्रजा यह नहीं सोचती थी कि उसकी भी भागीदारी राज्य करने में होगी। शायद ग्राम पंचायत की संस्था सबसे पहली ऐसी संस्था थी जिसमें शासित को अपना भाग महसूस हुआ।स्वामीजी मानव की अन्तः प्रकृति को उसकी बाह्य प्रकृति से अधिक महत्त्वपूर्ण मानते थे। वे कहा करते थे मानव रुपया बनाता है, रुपया मानव नहीं बनाता। मनुष्य का सारा सुख उसके नैतिक और आध्यात्मिक जीवन पर निर्भर है। यदि मानव जीवन इस तत्त्व से विहीन है तो किसी भी तरह की राजनीतिक या आर्थिक व्यवस्था, किसी भी तरह का समाज, किसी भी तरह की विश्व-व्यवस्था, किसी भी तरह की वैज्ञानिक तथा तकनीकि ज्ञान में वृद्धि और कितना भी सम्पन्न भौतिक जीवन उसे सुख नहीं पहुंचा सकता। कोई भी समाज इस बात से सुखी नहीं हो सकता कि उसकी संसद ने क्या नया कानून बनाया है। समाज का स्थाई सुख तो इस बात पर निर्भर करता है कि कितने अच्छे लोग उस समाज में रहते हैं। शिक्षा पद्धति और सामाजिक व्यवस्था कैसी है ? स्वामीजी उसका उत्तर देते हैं कि यह व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए जिससे समाज में रहने वाले शारीरिक, मानसिक और आत्मिक सुख से सम्पन्न रहें।"

स्वतंत्रता और कानून

स्वामी विवेकानन्द इस बात को मानते थे कि स्वतन्त्रता वह स्थिति है जिसमें व्यक्ति या समाज को अपने भाग्य का फैसला खुद करने की आजादी हो। आध्यात्मिक दृष्टि से मोक्ष ही जीवन का अन्तिम ध्येय है। सभी धर्म और सभी पद्धतियाँ एक ही लक्ष्य की ओर जा रहे हैं- सभी आजादी का तराना गाते हैं। लेकिन यह स्वतन्त्रता समाजिक और राजनैतिक क्षेत्र में तो अन्तिम लक्ष्य भी रहती है और साधन भी।स्वामी जी का कहना है कि स्वतन्त्रता विकास की पहली शर्त है। समाज के जिस क्षेत्र में भी कार्य करने

की स्वाधीनता होगी, वहीं विकास दृष्टिगोचर होगा। यद्यपि स्वतन्त्रता का अर्थ बंधनों से मुक्ति माना जा सकता है परन्तु यदि सही से सोचा जाये तो सभी तब ही स्वतन्त्र होंगे जब सबकी स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध न लगे होंगे। रूसो और स्वामी जी की सोच इस मामले में एक है। रूसो ने कहा था कि मनुष्य स्वतन्त्र पैदा होता है, परन्तु हर जगह उसको बंधनों में जीना पड़ता है। ये बंधन दूसरों की स्वतन्त्रता बनाए रखने के लिए जरूरी हैं। स्वामीजी समाज में स्वतन्त्रता का वातावरण पनपने के लिए विशेषाधिकारों और विशेष सुविधाओं की समाप्त की बात कहते हैं। उनका कहना है कि जब तक समाज में ऐसा वर्ग पनपता है जिसे विशेष सुविधाएँ प्राप्त हैं तब तक स्वतन्त्रता का वातावरण पैदा नहीं हो सकता। प्रकृति ने सबको बराबर उत्पन्न किया है फिर विशेषाधिकारों की बात कैसी। स्वामी ने विशेषधिकारों को समाज से हटाने की जो बात कही है उसके दूरगामी प्रभाव हैं। उनका कहना है कि प्रत्येक व्यक्ति में योग्यताएँ हैं, परन्तु यदि उन योग्यताओं को उभरने और प्रकट होने का मौका न मिले तो वह व्यक्ति पिछड़ जाता है।

आज के समाज में योग्यताओं के उभरने के इन मौकों का नाम ही अधिकार है। जैसा प्रो. बार्कर ने कहा है कि व्यक्तियों को अधिकार मिलने से ही स्वतन्त्रता के असली अर्थ उजागर होते हैं। विवेकानन्द उसी दिन की तलाश में हैं जब प्रत्येक व्यक्ति अपने 'स्वयं' को विकसित करने का अवसर पाएगा। विशेषाधिकार की बात जब दुनिया से मिटेगी तभी मानव-मानव के बीच समानता का सम्बन्ध भी विकसित होगा। स्वामी जी आनुवांशिकता का सिद्धांत भी नहीं मानते। उनका कहना है कि समाज में विशेषाधिकार लाने का यह भी एक तरीका है। क्या ब्राह्मणों के वंशजों का ही विद्या पर अधिकार रहेगा ? क्या किसी अन्य वर्ग का व्यक्ति उस तरह का विद्यवान नहीं हो सकता ? यदि सही वातावरण और सुविधाएं मिलें (जिन्हें आज के युग में राजनैतिक अधिकारों के नाम से जाना जाता है) तो आनुवांशिकता का यह सिद्धान्त चलने वाला नहीं है। इस प्रकार प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति को अपने वर्ण के अनुसार बेहतर बनने की आवश्यकता है।"

क्रान्ति का सिद्धान्त

स्वामी जी का क्रान्ति का सिद्धान्त एक तरह से उनके जाति अभिवर्तनों के सिद्धान्त से काफी मेल खाता है। स्वामी जी का कहना है कि समाज में राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए जाति अभिवर्तन का सिद्धान्त अपना काम करता रहता है परन्तु यह जरूरी नहीं कि लोग परिवर्तन चक्र के पूरा घेरा होने तक प्रतीक्षा करें। ऐसा भी हो सकता है कि परिवर्तन लाने की चाह समाज में पहले ही उत्पन्न हो जाये तभी क्रान्ति के आने की सम्भावना रहेगी।"

देशभक्ति और समाजवाद

स्वामी जी एक अलौकिक देश भक्त थे। उन्हें अपने देश के अतीत पर गर्व था। उन्हें अपने देश के कंगाल करोड़ों लोगों से प्यार था। वे कहा करते थे कि देश कोई भौगोलिक इकाई नहीं है, और न ही वह कोई दार्शनिक संकल्पना है वह तो मात्र उसके लोग हैं- और लोगों से उनका तात्पर्य किसी समृद्ध वर्ग के लोगों से नहीं अपितु देश के करोड़ों साधारण लोगों से था। स्वामी जी का कहना था कि देश भक्त होने के लिए तीन बातें आवश्यक हैं- जनसाधारण के लिए अतिशय प्यार, कागजी बातों के स्थान पर उनकी दशा

सुधारने के लिए ठोस कार्यक्रम, इस कार्यक्रम को लागू करने के लिए साहस, निष्ठा और संकल्प। स्वामी जी चाहते थे कि जनता को उसकी हालत के प्रति अशांति उसके मन में जगाई जाय ताकि वह उससे बाहर निकलने के लिए उद्यत हो सके। परन्तु उनकी पद्धति मार्क्सवादी नहीं थी- वे संघर्ष, घृणा, भौतिकवाद को बढ़ावा देकर समाज में परिवर्तन का आरम्भ नहीं करना चाहते थे। उनका समाजवादी मन उनके लिए वेदांत से ही बना था। जब सभी में परमात्म तत्त्व है तो फिर भेद-भाव कैसा, वे निर्धन को 'दरिद्र-नारायण' कहते थे। उनका कहना था कि परमात्मा का दर्शन दरिद्रनारायण की सेवा से ही प्राप्त हो सकता है। इस तरह से सदियों से चले आ रहे मोक्ष के पुराने विचार को उन्होंने नई बात से भर दिया। यह एक क्रान्तिकारी परिवर्तन था। उनका कहना था देश की करोड़ों भूखे, नंगों के लिए जो सोचेगा मैं उसे महात्मा कहूंगा, और जो इनके बल पर शिक्षित होकर इनकी नहीं सोचता मैं उसे देश द्रोही के अतिरिक्त कुछ नहीं मानता।"

निष्कर्ष

स्वामी विवेकानंद का जन्म 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में हुआ लेकिन उनके विचार और जीवन दर्शन आज के दौर में अत्यधिक प्रासंगिक हैं। विवेकानंद जैसे महापुरुष मृत्यु के बाद भी जीवित रहते हैं और अमर हो जाते हैं तथा सदियों तक अपने विचारों और शिक्षा से लोगों को प्रेरित करते रहते हैं। मौजूदा समय में विश्व संरक्षणवाद एवं कट्टरवाद की ओर बढ़ रहा है जिससे भारत भी अछूता नहीं है, विवेकानंद का राष्ट्रवाद न सिर्फ अंतर्राष्ट्रीयतावाद बल्कि मानववाद की भी प्रेरणा देता है। इसके साथ ही विवेकानंद की धर्म की अवधारणा लोगों को जोड़ने के लिये अत्यंत उपयोगी है, क्योंकि यह अवधारणा भारतीय संस्कृति के प्राण तत्त्व सर्वधर्म समभाव पर ज़ोर देती है। यदि विश्व सर्वधर्म समभाव का अनुकरण करे तो विश्व की दो-तिहाई समस्याओं और हिंसा को रोका जा सकता है। भारत की एक बड़ी संख्या अभी भी गरीबी में जीवन जीने के लिये मजबूर है तथा वंचित समुदायों की समस्याएँ अभी भी वैसी ही बनी हुई है। यदि विवेकानंद की दरिद्रनारायण की संकल्पना को साकार किया जाए तो असमानता, गरीबी, गैर-बराबरी, अस्पृश्यता आदि से बिना बल प्रयोग किये ही निपटा जा सकता है तथा एक आदर्श समाज की संकल्पना को साकार किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1 डॉ. कर्ण सिंह भारतीय राष्ट्रीय का अग्रदूत ग्रंथ विकास, जयपुर, 1999, पृष्ठ 98,

2 स्वामी विवेकानन्द, व्यावहारिक जीवन में वेदांत रामकृष्ण मठ, नागपुर, 1994, पृष्ठ 59,

3 स्वामी विवेकानन्द, हे भारत, उठो जागो, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 1997, पृष्ठ 142,

4 राजेन्द्र प्रसाद गुप्त, स्वामी विवेकानन्द, व्यक्ति और विचार, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 92,

5 डॉ. शिखा अग्रवाल, स्वामी विवेकानन्द और संस्कृति राष्ट्रवाद, आविष्कार पब्लिशर्स जयपुर, 2003, पृष्ठ 56,

6 आशा प्रसाद, स्वामी विवेकानन्द एक जीवनी, दियामोंद पोकेट बुक्स पीवीटी एलटीडी, 2018, पृष्ठ 77,

7 अद्वैत आश्रम, स्वामी विवेकानन्द और उनका अवदान, पब्लिकेशन हाऊस ऑफ रामकृष्ण मठ बैल्यूर कोलकाता, 2002, पृष्ठ 144,

8 राधिका नागराथि, स्वामी विवेकानन्द, प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली, 2015, पृष्ठ 175,

9 संपादक गिरीराज शरण, मैं विवेकानंद बाल रहा हूँ, प्रतिभा प्रतिष्ठान प्रकाशक नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ 89